बिश्नोई धर्म के सामाजिक सरोकार

शोधार्थी
शारदा
दक्षिण भारत हिंदी प्रचारिणी सभा, चेन्नई
क्षेत्रीय केंद्र धारवाड़

अगर हम विश्व के महान धर्मों में से किसी भी एक धर्म की गहराई में जाए तो पता चलेगा कि इसके सामाजिक सरोकार कितने सार्थक हैं। सभी धर्म मानते है कि परम सत्य अनादि है, वह समय तथा भौतिक पदार्थो से परे है। इस प्रकार यह परम सत्य सभी वर्गों के लिए सभी समय एक समान ही रहता है। श्री गुरू जम्भेश्वर उन सभी को सामाजिक और आध्यात्मिक मार्ग बताया जो परम सत्य की खोज में निजी तौर पर लगे हुए थे परम सत्य अवर्णनीय है, वह शब्द और सामान्य मन की सीमाओं से परे है। श्री गुरू जम्भेश्वर तथा अन्य आध्यात्मिक विभूतियों का सबके लिए संदेश यही है कि युगों से पूर्ण ज्ञान प्राप्त ग्रुप इस संसार में अवतरित होते रहें और समाज उसके सामाजिक सरोकारों से रूबरू करवाकर उनका आध्यात्मिक विकास करें इस भारतीय आध्यात्मिक लम्बे इतिहास में विभिन्न प्रकार की धार्मिक शाखाएं और उपशाखाओं के साथ ही कई परम्पराएँ एवं पंथ दर्ज है। बिश्नोई धर्म इसी इतिहास की एक परम्परा है जो जीवित है और समाज को धर्म की परिभाषा से व्याख्यायित करती है। दार्शनिक मानते है कि धर्म व्यक्तिगत होता है। इसका चयन करने का अधिकार व्यक्ति का व्यक्तिगत और एकल होता है। यहाँ मनु के धर्म के इस लक्षणों का उल्लेख करना संगत रहेगा,

"धृतिः क्षमा दमोऽस्तेय" शौचमिंद्रियनिग्रह
धीविधा सत्यम क्रोधो, दशक धर्मलक्षमणम्।"[१]

अर्थात् इन दस लक्षणों आधार पर धर्म के सामाजिक सरोकार रूपायित होते हैं। धर्म समाज में मनुष्य की आदर्श जीवन जीने की कला का विकास करता है। धर्म मनुष्य को एक नई दिशा देता है। मध्यकालीन समाज की जनता जब सामाजिक और अन्य प्रकार के आक्रोश का शिकार हो रही थी तब श्री जम्भेश्वर ने उसे बिश्नोई धर्म का सहारा देकर उनको इस सामाजिक आक्रोश से उबरने का सामर्थ्य प्रदान किया था। उन्होंने अपने बिश्नोई धर्म में अज्ञानता और उससे होने वाले दुखों से मुक्ति के उपाय समाज में जनता के सामने प्रस्तुत किए है। उन्होंने समाज में यह बात स्पष्ट कि मनुष्य का परम उद्देश्य निर्वाण प्राप्ति है। इस उद्देश्य का पूरा करने के लिए एक पवित्र एंव नैतिक जीवन को अपनाने की आवश्यकता होती है। एक सुयोग्य सतगुरू के मार्ग दर्शन में पूरी लग्न और आन्तरिक अभ्यास से बुद्धि तथा शब्दों से परे के मंडलों तक पहुँचने का अथक प्रयास ही सच्ची भक्ति है। बिश्नोई धर्म इसी की व्याख्या समाज में करता है। 'बीस+नौ' नियमों को अपने जीवन में उतारकर अपने समाज तथा अपनी आत्मा का उतार कर बिश्नोई लोग करते हैं।

श्री हरि जम्भेश्वर ने सन् १४८३ के आस पास जब उनकी कीर्ति चारों ओर फैल गई थी, और दुखी लोग उनके पास आकार अपने दुखनाथ का मार्ग पूछने लगे और उनके सत्संग का लाभ लेने लग गए थे। इसी समय राजस्थान के इस भाग में भयंकर अकाल पड़ा तब श्री गुरू महाराज ने अकाल से पीड़ितों की सहायता की और लोगों के संकट को काटने के लिए लोगों की भरपूर सहायता की। उसी समय श्री हरि ने एक विराट यज्ञ का आयोजन किया और एक कलश की स्थापना की जिसको पाहल कहा

जाता है और उनतीस नियमों का निवर्हन करने की दीक्षा देकर लोगों को बिश्नोई धर्म में दीक्षित किया।

" करिमाला मुख जाप करि, सोह मेटियो कुधाने
पहली कलय परठियौ, सझय ब्राह्मण सिनान।"[२]

यह नवीन सम्प्रदाय के लोगों द्वारा उत्साह पूर्वक अपनाया गया। और लोग दूर-दूर से आकर बिश्नोई धर्म में दीक्षित होने लग गए।

" उणतीस धर्म की आखड़ी हिरदै थरियो जोय
जाम्भे जी कृपा करी, नाम बिश्नोई होई।"[३]

धर्म मानता है कि मनुष्य की मुक्ति इसी जन्म में संभव है। इनके लिए उसे देखना चाहिए कि उसकी जीवन शैली क्या है। जिन्होंने जीने की सामाजिक विधि को पहचान लिया वह जीवन सफल बना लेते है। जिस उपदेश की चर्चा श्री गुरू जम्भेश्वर ने खुली शिष्य मंडली में किया और बार-बार एक ही बात कि सत्य धर्म है और उनतीस नियमों की सेवा से धर्म को प्राप्त करना सहज है। जीवन में यही उनतीस नियम धारणीय तत्व है। जिसने सच्चे मन से इनको धारण कर लिया उसका बेड़ा पार हो गया। इतिहास इस बात का साक्षी है जब भी मनुष्य को समाज में किसी प्रकार से काम और अर्थ का सेवी बना तो उसे अशांति हुई। इस अशांति को जम्भेश्वर के वचनों और वाणी ने दूर किया। गुरू जम्भेश्वर ने विष्णु की उपासना पर बल देकर धर्म का जयघोष किया। उनका मध्यकालीन युग में जगाया गया घोष आज के इस वैज्ञानिक युग में पूर्णतः कारगर है और लोगों द्वारा अपनाया ही नहीं जा रहा बल्कि जीवन में उतारा भी जा रहा है। गुरू जम्भेश्वर द्वारा बताए गए नियम पूर्णतः सामाजिक एवं व्यावाहारिक है। उनके सामाजिक सरोकार बहुत उच्च एवं सात्विक हैं। प्रत्येक नियम के पीछे व्यावहारिक आधार है। यह आधार पूर्णतः सामाजिक एवं वैज्ञानिक हैं। गुरू जम्भेश्वर ने सामाजिक विकास की धूरी स्त्री को को माना है। उन्होंने स्त्री को पुरूषों के बराबर माने जाने की बात कही है। उन्होंने स्त्री को स्वरूप एवं शुद्ध रहने के लिए दो नियम बनाए हैं। प्रथम नियम पाँच दिन तक स्त्रियों का रजस्वला होना उस प्राकृतिक अवस्था का परिणाम है। जो स्त्री की शारीरिक दृष्टि से होती है। इसका संबंध निश्चित आयु से होता है। यह शारीरिक वैज्ञानिक प्रक्रिया होती है। यही प्रक्रिया औरत की संतान के योग्य बनाती है। इसी से वंश चलता है। सृष्टि चलती है। संसार चलता है। इस अवस्था मे मनुष्य को स्त्री के साथ प्रेम एवं लगाव का भाव रखना, उसके शरीर में रक्त स्त्राव के शारीरिक कमजोरी एवं थकान का अनुभव होता है, उसे घरेलू कार्यों से छुटकारा देना चाहिए। इसका स्त्री जब बालक को जन्म देती है तो तीस दिन तक बालक के जन्म पर स्त्री को गृहकार्यों से अलग रखने की बात कही है। यह भी वैज्ञानिक एवं सामाजिक व्यवहार की बात है। भारत में ऋतु परिवर्तन की परम्परा के कारण घर में तीस दिन का यह नियम बालक और माँ दोनों को बीमारियों एवं वातावरण प्रभाव से बचाता है। स्त्रियों को लेकर मध्यकालीन संत परम्परा स्त्री को लेकर इस तरह की बात कहने वाले इस तरह के पहले संत हैं। कबीर संत परम्परा के शिरोमणि कवि हैं। उनके दोहो में भी स्त्रियों को लेकर इस प्रकार की सोच और सामाजिक सरोकार देखने के लिए नहीं मिलते बल्कि वो तो कहते हैं,

" नारी की झाँई परत, अंधा होत भूजंग।
कबीर उनकी कौन गति जै नित नारी के संग।" [४]

दूसरी और बाबा तुलसी की बात करे तो बाबा तुलसी का काव्य समन्वय की विराट चेष्टा है। इतना ही नहीं, आलोचकों ने बाबा तुलसी को लोकमंगल का बड़ा नायक कहा है वे भी औरत को लेकर एक स्थान पर कहा है।

" ढोल गँवार शूद्र पशु नारी
ये सब ताड़न के अधिकारी।"[५]

इधर गुरू जम्भेश्वर नारी के स्वास्थ्य की वकालत करते हैं और कहते है नारी हमारे समान बराबर की हकीकी है। मान्यता है कि बालयोगी लक्ष्मण नाच एक बार ब्रह्मचारी को नारी को बहुत सम्मान दिया है। गुरू जी कहते हैं।

" तइयाँ सांसु तइयां मांस, तहया देह दमोही
उत्तम मध्यमा क्यू जाणी जैं, विखरस देखों लोई।"[६]

अर्थात पुरूष में वही मांस है जो स्त्री में है, उसका शरीर भी उसी प्रकार है जिस प्रकार का पुरूष का है, फिर भी स्त्री को लेकर भेद भाव क्यों किया जाता है। इसको हीन क्यों समझा जाता है। गुरू जम्भेश्वर के ५५० वर्ष बाद आज समाज में और अपनी वाणी के माध्यम से कर दी थी। नारी और पुरूष की बात नहीं जम्भेश्वर के सामाजिक सरोकार मानवेत्तर को लेकर वनस्पति तक भी थे। वे उस समय से पर्यावरण को लेकर चिंतित नजर आते हैं। वे जानते थे कि प्रकृति मानव जीवन की सहचरी है, उसके बिना का जीवन सुखी और समृद्ध नहीं रह सकता। प्रकृति मनुष्य के खाने के लिए बिना का जीवन सुखी और समृद्ध नहीं रह सकता। प्रकृति मनुष्य के खाने के लिए और पीने के लिए और सांस लेने के लिए वह सबकुछ प्रदान करती है जिसकी मनुष्य को अपना जीवन चलाने के लिए आवश्यकता होती है। जिस युग में जम्भेश्वर का अवतरण हुआ, उस युग में कृषि प्रधान समाज कृषि के लिए पशुओं का सहारा लेता था। जम्भेश्वर अपनी वाणी अमावस्या का महत्व बताते हुए खेत के काम से आराम की बात कही जिससे आदमी और बैल आदि को विश्राम मिल जाए और ईंधन को छान कर उपयोग में लाने की बात कही है। मतलब साफ है कि लकड़ी और ईधन के कीड़े-मकौड़े और अन्य जीव से झड़ जाए और जीव हिंसा से बचा सके।

गुरू जम्भेश्वर ने प्रत्येक बिश्नोई के घर में होम करने (हवन) की बात अपनी वाणी के माध्यम से की है।

" द्विकाल संध्या साँझ आरती गुण गातो
होम हित चित प्रीतसूं होय वास बैंकुठो पावो।"[७]

होम करने शुद्धि होती है। यह शुद्धि आत्मा की शुद्धि से लेकर पर्यावरण तक शुद्धि है। इससे मनुष्य को मानसिक शांति मिलती है। उसकी चितवृतियों में दंवीय संचार होता है। एक स्थान पर जम्भेश्वर ने मनुष्य नीले वस्त्रों से परहेज करने का भी शारीरिक सामाजिक संदर्भ है। नीला रंग मनुष्य के शारीरिक एवं मानसिक प्रकृतियों को प्रभावित करता है।

" दया धर्म का मूल है, पाप मूल अभिमान
तुलसी दया ना छडियो जब तक घर में प्राण"[८]

दया भारतीय समाज की मानवीय प्रवृतियों में रीढ़ की हड्डी मानी जाती रही है। यह भारतीय संस्कृति का अभिन्न अंग है। गुरू जी की भारतीय संस्कृति की परम्परा का पूर्ण निर्वाह करते हैं और दया को जीवन में महत्वपूर्ण स्थान देते है और कहते हैं।

" जीव दया पालणी, संस लीलो नहीं धावै
अजर जरै जीवत मरै, वै मास बैकुंठ पावै।"[९]

दया सभी प्राणियों के अनुग्रह का नाम है। जिस पुरूष का जीवन महत्वपूर्ण होता है उसी प्रकार इस धरती पर सब प्राणियों का जीवन महत्वपूर्ण होता है। अतः एक सच्चे बिश्नोई को दूसरे के चाहे वह अन्य जीव हो उसका संरक्षण एवं सम्बर्द्धन करना चाहिए, हरे वृक्ष को भी नहीं काटना चाहिए। इसमें भी जीवन होता है। संत मलूक दास जी लिखते हैं,

" हरि हारि ना तोडिये, लागे छूटा बान
दास मूलका कह गए अपना सा जीव जान"[१०]

गुरू जम्भेश्वर समाज को मनोविकारों से मुक्त करना चहाते थे। जिससे कि समाज में शील संतोष एवं शुद्धि के गुणों को प्रसारित किया जा सके। समाज में सामाजिक के नाते सदैव मनुष्य को शील संतोष और पवित्रता के साथ मनुष्य को मनुष्य से प्रेम करना चाहिए।

" सेरो करो सनान, शील संतोष शुचि प्यारो।"[११]

शील धर्म तो सदैव मनुष्य का गहना रहा है। आजीवन गुरू जम्भेश्वर ने शीलवान रहने का आदर्श प्रस्तुत किया और कहा जो व्यक्ति शील का गहना धारण करता है, निरोधी भी उसके मित्र हो जाते हैं। शील से बड़ा कोई गुण और संतोष से बड़ा कोई धन नहीं होता कहा भी गया है,

" गौ धन गज धन बाजि धन और रत्नधन खान
जब आवै संतोष धन सबधन धूरि समान।"[१२]

शील के साथ उसका स्वरूप क्षमा रूपी गुण का है। क्षमा पुण्य की परिभाषा की व्याख्या करता है। क्षमा पुण्य की परिभाषा की व्याख्या करता है। क्षमा को लेकर गुरू जम्भेश्वर कहते है, " क्षमा दया हिरदै घरो, गुरू बतायो जाण।"[१३]

अर्थात् बिश्नोई धर्म गुरू श्री जम्भेश्वर यह जानते थे कि आदमी गलतियों का पुतला है, वह मनोविकारों से ग्रस्त है और मनोविकारों के कारण वह समाज में विभिन्न प्रकार गलतियाँ करता रहता है, समाज उसकी गलतियों को क्षमा कर उससे गलतियों का प्रायश्चित आसानी से करवा सकता है। इतना क्षमा के प्रभाव बड़े-बड़े असामाजिक प्राणियों को सामाजिक बनाया जा सकता है। इसका यह भी कारण है कि गुरू जी कर्मशील थे और कर्म में विश्वास रखते तथा अच्छे कर्म करने के लिए अपनी शिष्य संगत को प्रवचन देते थे। ऐसे में जो गलत कार्य करेगा उसको अपने गलत कार्य का भुगतान स्वयं करना पडेगा। सामाजिक उक्ति भी है जो यही सीखाती है

" चेला जाए अपनी गुरू जाए अपनी करनी
सबनै अपनी अपनी पार उतरणी।"[१४]

गुरू जी बड़े सरल स्वभाव के थे वे कहते थे ये समाज मनुष्य की धरोहर है। अतः अच्छे कर्मों के माध्यम से इस समाज को उत्तम बनाना चाहिए। उत्तम बनाने के लिए मनुष्य को अच्छे कर्मों में प्रवृत रहना चाहिए। समन्वय की भावना को अपने जीवन में उतारना चाहिए।

" उत्तम मध्यम का जाणी है,
विवरस देणो लोई"[१५]

मनुष्य के अच्छे कर्म करने से वह मुक्ति की ओर अग्रसर हो सकता। अच्छे कर्मो से एक साधरण मनुष्य अच्छा जीवन जी सकता है। जिन्होंने अपने कर्मों को पहचान लिया मान लो अपने जीवन को जान लिया और जी कर, सुख प्राप्त कर मुक्ति प्राप्त कर ली। सभी धर्मों की नींव समाज रूपी मिट्टी में होती है। समाज मनुष्य निर्मित इकाई का नाम है जिसका निर्माण मनुष्य ने अपनी सुरक्षा और इच्छा पूर्ति के लिए किया था। इच्छापूर्ति से मेरा अभिप्राय आवश्यकता पूर्ति है। इस आवश्यकता में पारस्परिकता अवश्यभावी है। पारस्परिकता की चेतना परहित का आधार बना कर चलती है। अतः धर्म का अध्ययन करने वाले विद्धानों का मानना है कि सभी धर्म पर हित का संदेश देते है। बाबा तुलसी दास का मानना है,

" पर हित सरस धर्म नहीं आई,
पर पीड़ा सम नहीं अधमाई।"[१६]

गुरू जम्भेश्वर का भी मानना है कि परहित में जैसा मिलता है, स्वयं के हित में वैसा सुख नहीं मिलता। सच्चे मनुष्य की यह पहचान है कि वह परहित करे संतोषी रहे और समाज हित में सदैव कार्य करे। परोपकारी की एक बड़ी बात और है कि वह किसी की निंदा नहीं करता। गुरू जी कहते है,

" पर निंदा पापा सिरै
भूल उठावै भार।"[१७]

अर्थात् किसी निंदा करना बहुत बुरी बात है। निंदा से व्यक्ति पापी बनता है। हालांकि मध्यकालीन संत कबीर का मानना है,

" निंदक नियरे राखिए, आंगन कुटी छवाय
बिन पानी साबुन बिना निर्मल करे सुभाय।।"[१८]

कबीर की यह बात उच्च कोटी की पाप मानकर उससे बचने को उचित माना है। सत्य को अपनाने के लिए गुरू जम्भेश्वर का कथन है,

" चोरी निंदा झूठ बरजियो वाद न करियो कोय।"[१९]

सत्य के बाद कोई धर्म नहीं है, झूठ के बराबर कोई पाप नहीं है। कहा भी गया है।

" साच बराबर तप नहीं झूठ बराबर पाप
जाके हिरदै साच है ताके हिरदै आप।"[२०]

कबीर दास ने भी सच्चाई को परमात्मा को स्वरूप माना है और कहा है कि जो सच्चाई के संमार्ग पर चलते है उनके हृदय में परमात्मा का निवास होता है। महात्मा गांधी भी सत्य को परमेश्वर मानते हुए लिखते है,

" सत्य रूपी परमात्मा मेरे लिए रत्न चिंतामणि सिद्ध, जिससे मुझे सारे उद्देश्यों' की प्राप्ति हो गई।"[२१]

सत्य के प्रभाव से वाद विवाद समाप्त हो जाते है। मनुष्य सद् कार्यों की ओर अपना ध्यान लगा लेता है। मनुष्य के जीवन में विवादों की जड़ उसकी जीभ काबू में आ जाती है। बिश्नोई धर्म के आदि गुरू श्री जम्भेश्वर के उनतीस नियम समाज में सामाजिक सरोकारों के निमित्त है। ये सभी नियम सामाजिक है और सरल स्वरूप तथा सिद्धांत वाले है, कहीं किसी नियम में हठयोग या समाधि साधना की आवश्यकता नहीं है। वास्तव में बिश्नोई धर्म एक सरल जीवन पद्धति जिसके सामाजिक सरोकार और सामाजिक आदर्श सम्मुन्नत हैं। बिश्नोई धर्म इस जीवन पद्धति और सामाजिक सरोकारों से तात्कालिन समाज को नव जागरण का संदेश मिला, नई चेतना मिली लोगों का जीवन उच्च आदर्शी बन गया। उनतीस बाते जीवन शैली को सुधारने के लिए पर्याप्त सिद्ध हुई।

" उणतीस धर्म की आखड़ी, हिरदै घटियों जोई
जाम्भै जी कृपा करै, नाम बिश्नोई होई।"[२२]

संदर्भ सूची।

१. मनुस्मृति धर्म अंश।
२. स्वामी राम प्रकाश के प्रवचन का अंश
३. कृष्ण लाल बिश्नोई, बिश्नोई परम्परा का इतिहास पृ० २४०
४. श्यामसुदर कबीर ग्रंथावली २४६
५. पीताम्बर बडध्वाल तुलसी रचनावली २६३
६. ब्रह्मनंद स्वामी, जमीवाणी व्याख्या १४३
७. बिश्नोई धर्म ग्रंथ अंश
८. तुलसीदास कवितावली पृ० ७३
९. बिश्नोई धर्म संहिता अंश
१०. मलूकदास शब्दवाली पृ० १०४
११. कृष्ण लाल बिश्नोई, बिश्नोई परम्परा का इतिहास २१६
१२. रविवारीय दैनिक ट्रिब्यून ०८.०८.१९९७ अंश
१३. बिश्नोई धर्म संहिता का अंश
१४. रविवारीय दैनिक ट्रिब्यून ०८.०८.०१९९७ का अंश
१५. बिश्नोई धर्म संहिता अंश
१६. तुलसीदास कवितावली पृ० २०२
१७. ईश्वरनाथ गिरि जम्भसागर पृ० ७३
१८. श्याम सुंदर कबीर संधावली ७९
१९. ईश्वर नाथ गिरि जम्भसागर १०६
२०. श्याम सुन्दर ग्रंथावली
२१. महात्मा गांधी सत्य के मेरे प्रयोग ७३
२२. कृष्णलाल बिश्नोई परम्परा का इतिहास २१७